ISSN 2229 4732

शब्द सरोकार

अंक 58, वर्ष 16 जनवरी - मार्च 2019

सम्पादक डॉ. हुकुमचन्द राजपाल

UGC Approved at Sr. 3739 Arts & Humanities Group

भाषा के संदर्भ में भारतीय संस्कृति का वैश्विक प्रसार

- अमिता

संस्कृति पद का साक्षात् अर्थ है - सम्यक् अथवा सुन्दर कृति। संस्कृति शब्द सम् उपसर्गपूर्वक कृ धातु से कितन् प्रत्यय लगाकर बना है जिसका शाब्दिक अर्थ है - उत्तम प्रकार से किया गया कार्य।[1] संस्कृति का संबंध समस्त विश्व के सभी मानवों की आत्मा से होता है। देश और समाज की सभ्यता भिन्न-भिन्न हो सकती है जिसका लक्ष्य भी मानव को शिष्ट बनाना ही होता है क्योंकि सभ्यता का सम्बन्ध सामाजिक शिष्टाचार से होता है। अतः कर्त्तव्याकर्त्तव्य में भी देश-काल-व्यक्ति के अनुसार परिवर्तन हो सकता है। परन्तु संस्कृति का स्वरूप आद्यन्त एक समान रहता है। संस्कृति स्थानसापेक्ष नहीं होती अर्थात् संस्कृति में देश-प्रदेश व विदेश की भी बाधा नहीं होती। अभिप्राय यह है कि संस्कृति देश एवं काल से अबाधितस्वरूपा होती है। 'संस्कृतिः संस्कृताश्रिता' काव्य सत्यवाक् है।[2]

विश्व के सभी देशों की अपनी-अपनी संस्कृति है और वह सम्बन्धित देशवासियों के लिए महत्त्वपूर्ण है किन्तु भारतीय संस्कृति विश्व की संस्कृतियों में सबसे प्राचीन और विशिष्ट है। अपने भावों, विचारों को दूसरे तक पहुँचाने का माध्यम भाषा है। भाषा न केवल संस्कृति की निर्मात्री होती है अपितु वह संस्कृति की परिचायक और संवाहक भी होती है। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार समूचे विश्व में 2800 भाषाएँ हैं, उनमें सबसे प्राचीन भाषा का नाम पड़ा संस्कृत।[3]

भारत के प्राचीनतम इतिहास को जानने के लिए वैदिक साहित्य एक महत्त्वपूर्ण साधन है। अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में जब यूरोपियन विद्वानों ने भारत के सम्पर्क में आकर संस्कृत भाषा का अध्ययन शुरू किया, तो उन्हें यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि संस्कृत की लेटिन और ग्रीक भाषाओं के साथ बहुत समता है। इसे प्रकट करने वाले प्रथम विद्वान केअर्दू थे, जिन्होंने 1767 ई. में ग्रीक और लेटिन की संस्कृत के साथ समता का प्रतिपादन किया था। केअर्दू फ्रेंच थे और इसी कारण ब्रिटिश विद्वानों ने उनके आविष्कार पर अधिक ध्यान नहीं दिया। उनके कु समय बाद 1786 ई. में सर विलियम जोन्स नामक अंग्रे विद्वान ने इसी तथ्य को प्रकट किया और उन्होंने यह प्रतिपादि किया कि संस्कृत, लेटिन, ग्रीक, जर्मन और केल्टि भाषाएँ एक ही भाषा परिवार की हैं और इनका मूल उद्ग स्थान एक ही है।[4]

संसार की वर्तमान और प्राचीन भाषाओं का अध्ययन कर विद्वान लोग शब्द कोष और व्याकरण की दृष्टि से उनकी तुलना करने लगे और उन्होंने यह परिणाम निकाला कि इटालियन, फ्रेंच, स्पेनिश, ग्रीक, केल्टिक, जर्मन, इंग्लिश, ट्यूटानिक, स्लाबोविक, लिथुएनियन, लेटिन, अल्बेनियन आदि यूरोपीयन भाषाएँ, उत्तरी भारत की हिन्दी, पंजाबी, मराठी, गुजराती, बंगाली, उड़ीसा आदि भाषाएँ तथा पश्चिमी एशिया की जन्द, पर्शियन, पश्तो, बलूची, कूर्द और आर्मीनियन भाषाएँ एक विशाल भाषा-परिवार की अंग हैं। इस समता का कारण यही हो सकता है कि इन विविध भाषाओं को बोलने वाले लोगों के पूर्वज किसी अत्यन्त प्राचीन काल में एक स्थान पर निवास करते थे और एक भाषा बोलते थे। बाद में जब वे अनेक शाखा-प्रशाखाओं में विभक्त होकर विविध प्रदेशों में बस गये, तो उनकी भाषाएँ पृथक रूप से विकसित हो गईं।[5]

इन भाषाओं को बोलने वाले लोगों के लिए विविध लेखकों ने 'इण्डो-जर्मन', 'इण्डो-यूरोपीयन, 'इण्डो-ईरानियन', 'आर्यन्' आदि विविध नामों का उपयोग किया है। कुछ लेखकों ने इसके लिए 'वीराः' या 'वीरोस्' शब्द चुना पर अधिक प्रचलित शब्द 'आर्यन्' या 'आर्य' है। संस्कृत और प्राचीन ईरानियन भाषाओं में आर्य शब्द ही अपनी जाति के लिए प्रयुक्त होता था। भारत के आर्य लोग तो अपने को आर्य कहने ही थे, ईरानी लोग भी इसी का उपयोग करते थे। ईरान शब्द स्वयं आर्य का अपभ्रंश है, और इस शब्द की स्मृति 'आयरलैण्ड' के 'आयर' शब्द में भी विद्यमान है।

लिए आर्य संज्ञा का उपयोग करना उपयुक्त समझते हैं।[6]

अधिकांश भारतीय विद्वानों के अनुसार आर्य जाति का मूल निवास स्थान सप्तसिन्धव देश था तथा आर्य लोग भारत के अन्य देशों में गए। आर्य जाति की विविध शाखाएँ अनेक धाराओं में एशिया और यूरोप के विविध प्रदेशों में जाकर आबाद हुईं। सोलहवीं शताब्दी ई.पू. में ईराक के उत्तर-पश्चिम की ओर से आक्रमण कर कस्साइत् जाति ने बैबिलोन को जीतकर वहां अपना शासन स्थापित कर लिया। ये कस्साइत लोग आर्य जाति के थे। इनके राजाओं के नाम आर्य राजाओं के नामों के सदृश हैं। कस्साइत राजवंश की राजधानी बेबिलोन थी और ईराक के प्रदेश में स्थित इस प्राचीन नगरी में सम्भवतः यह आर्य जाति का प्रथम राजवंश था। कस्साइत् लोगों के प्रधान देवता सूर्य और मरुत् थे। इनकी भाषा भी आर्य-परिवार की थी। इनके जो लेख मिले हैं, उनके अनुशीलन से इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता कि ये लोग विशाल आर्य जाति की ही अन्यतम शाखा थे।[7]

पूर्व की ओर जो आर्य लोग गये, उनकी दो प्रधान शाखाएँ थी, ईरानी और भारतीय। जिस प्रकार भारतीय आर्यों का प्रमुख ग्रन्थ ऋग्वेद है, वैसे ही ईरानी आर्यों का प्रमुख ग्रन्थ जेन्दाबस्ता है। जेन्दाबस्ता की भाषा वैदिक भाषा से बहुत मिलती है। उसमें न केवल तत्सम शब्दों की प्रचुरता है, अपितु साथ ही व्याकरण, धातु आदि भी एक दूसरे के सदृश है। प्राचीन ईरानी लोगों का धर्म भी वैदिक धर्म के बहुत समीप था। मित्र, वरुण, अग्नि आदि वैदिक देवताओं की पूजा प्राचीन ईरानी लोग भी करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्व की ओर जाने वाली ये दोनों आर्य जातियाँ बहुत समय तक एक-दूसरे के साथ रहीं और उनके धर्म का साथ-साथ विकास हुआ। देर तक साथ रहने से उनकी भाषा भी एक-दूसरे के अधिक समीप रही।[8]

आर्यों की भारतीय एवं ईरानी शाखाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध था। पर समयान्तर में उनमें विरोध उत्पन्न हो गया। ईरानी आर्य प्रधानतया मित्र और वरुण की पूजा करने लगे और भारतीय आर्य इन्द्र की। इस प्रकार एक आर्य जाति की दो शाखाएँ, दो विभिन्न एवं परस्पर विरोधी धर्मों का अनुसरण करने लगीं पर उनके धार्मिक मन्तव्यों व पूजाविधि में जहाँ अनेक भेद विकसित हो गए, वहां उनमें सादृश्य भी पर्याप्त रूप में विद्यमान रहा। वैदिक आर्यों के समान ईरानी आर्य भी अग्नि के पूजक थे। वर्तमान समय के पारसी लोग भी अग्नि को पवित्र मानते हैं और उसकी पूजा करते हैं। अग्नि को पवित्र मानने के कारण पारसी शवों का दाह नहीं करते तथा धर्म-स्थानों में अग्नि को सदा प्रज्वलित रखा जाता है।[9]

चौदह सौ वर्ष पूर्व तुर्की और सीरिया के प्रदेशों में ऐसी जातियों के राज्य थे जिन्हें आर्य परिवार का कहा जा सकता है। इन प्रदेशों में आर्यों के धर्म और भाषा की सत्ता थी।[10] वैदिक काल में संस्कृत भाषा अत्यन्त समृद्ध थी। संस्कृत भाषा उस समय आम बोलचाल की भाषा थी। इसी भाषा के माध्यम से भारतीय संस्कृति का प्रसार अन्य प्रदेशों में हुआ। समय के प्रवाह में संस्कृत के सभी अंगों का ह्रास हुआ। अनेक भारतीय विद्वानों के अथक प्रयास से पुनः इसका सांस्कृतिक पुनरुत्थान का कार्य प्रारम्भ हुआ। महर्षि दयानन्द जी ने आर्य संस्कृति के प्रसार के लिए आर्य ग्रन्थों के भाष्य, वेदभाष्य, ऋग्वेदभाष्य, यजुर्वेद भाष्य आदि ग्रन्थों की रचना की। उन्होंने संस्कृत तथा आर्य भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए एक आन्दोलन छेड़ा था। मैक्समूलर जैसा संस्कृतद्वेषी भी इनके वेदभाष्यों को पढ़कर संस्कृत प्रेमी बना। सेंट पीटरबर्ग लैक्सिन ने 'संस्कृत-जर्मन-कोश' तथा 'मोनियर विलियम्स' ने 'संस्कृत-इंग्लिश कोश' तैयार किया है। इस प्रकार भारतीय संस्कृति का प्रसार विदेशों में हुआ।

संदर्भिका

1. भारतीय संस्कृति, डॉ. किरण टंडन, पृ. 1
2. नवनिबन्धस्तबक, डॉ. विक्रम कुमार, पृ. 1
3. शोध-प्रज्ञा, शोध-पत्रिका, जनवरी 2015, पृ. 117
4. प्राचीन भारतीय इतिहास का वैदिक युग, सत्यकेतु विद्यालंकार, पृ. 103
5. वही, पृ. 103
6. वही, पृ. 104
7. वही, पृ. 126
8. वही, पृ. 127
9. वही, पृ. 183
10. वही, पृ. 187

****